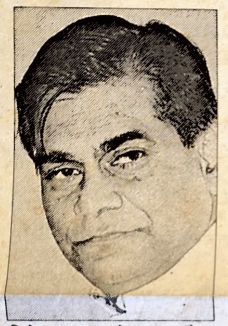
# म्यांमार से भी निबटना है नगाओं को

''भारत के साथ राजनीतिक समझौता हो जाने के बाद नगा विद्रोही म्यांमार का दरवाजा खटखटाएंगे, ताकि एक 'आजाद नगालैंड गणतंत्र' का रास्ता साफ हो सके, क्योंकि भारतीय संविधान के अंदर नगाओं को अपने वास्तविक अधिकार नहीं मिल सकते'' - यह कहना है नेशनल सोसलिस्ट कौंसिल ऑफ नगालैंड (खपतांग गुट) के महासचिव एन. किटोवी झिमोमी का, जो अपने को 'नगालैंड जनवादी गणतंत्र की सरकार' का स्वयंभू प्रधानमंत्री कहते हैं।

यह बयान 27 जुलाई को आया है, जब केन्द्र सरकार युद्धविराम का दायरा नगालैंड तक ही सीमित रखने को राजी हो गई। यह समझौता हुआ है नेशनल सोसलिस्ट कौंसिल ऑफ नगालैंड (एनएससीएन-आइसाक मुइवा गुट) के साथ, जिसे बातचीत के जरिए नगा समस्या का हल निकालने के लिए सहमत करने में केन्द्र सरकार को हाल ही में सफलता मिली है। इस सम्बंध में सार्थक वार्ता हो पाएगी या नहीं, इस सम्बंध में तो फिलहाल कुछ नहीं कहा जा सकता, लेकिन इतना तो मानना पड़ेगा कि पिछले चार साल (1997) से बार-बार बढ़ रहे युद्धविराम से खून-खराबा कम हुआ है। युद्धविराम एक अगस्त से पांचवें साल में भी प्रवेश कर गया।

एनएससीएन के जिस गुट से बातचीत करने केन्द्र की ओर से मध्यस्थ बनकर पूर्व गृह सचिव के. पद्मनाभैया कई बार बैंकॉक गए और फिर एम्सटर्डम भी गए, उसके नेता थुइंगालेंग समुदाय का प्रतिनिधित्व करते हैं, इसलिए उनके नाम से थुइंगालेंग जुड़ा है। इनके दूसरे साथी नेता हैं आइसाक चिसी, जो 'आई' संबोधन से इस गुट से जुड़े हैं। 'टी' का अर्थ है थुइंगालेंग।



विरोध शुरु हुआः के. पद्मनाभैया

नगालैंड के दूसरे समुदाय (खपलांग) के नेता हैं, एस.एस. खपलांग, जो सिर्फ हिंसा में विश्वास रखते हैं, मगर उन्हें मुइवा गुट के शांतिपूर्ण प्रयासों से कोई एतराज नहीं है। खपलांग मूल निवासी म्यांमार के हैं, इसलिए ज्यादा समय वहीं गुजारते हैं और इनका मानना है कि नगा समस्या का हल सिर्फ भारत के वश का नहीं है, क्योंकि उनकी वृहत्तर नगालैंड योजना के कई इलाके म्यांमार की सीमा में आते हैं। म्यांमार में खपलांग के 'प्रशासनिक क्षेत्र' के अंतर्गत ही नगाओं की आबादी 13 लाख से ज्यादा है, जो 'आजाद नगालैंड' के हिमायती हैं- ऐसा दावा है स्वयंभू प्रधानमंत्री किटोवी झिमोमी का।

एनएससीएन (खपलांग गुट) ने नगालैंड में अपना मुख्यालय म्यांमार की सीमा से लगे मोकोकचुंग जिले में बना रखा है, जो वर्षों से समूचे पूर्वोत्तर में हिसंक गतिविधियों का केन्द्र रहा है। वे भारतीय अथवा म्यांमार के संविधान को नहीं मानते। उनका कहना है कि नगालैंड का अपना अलग संविधान होगा, अलग सरकार होगी। अभी वे अपने को भूमिगत नगा सरकार का प्रधानमंत्री बताते हैं।

झिमोमी अपने अध्यक्ष खपलांग की मदद महासचिव के रूप में करते हैं। उनके मुताबिक नगाओं की आधी आबादी म्यांमार में रहती है, इसलिए बिना उसके तो वृहत्तर नगालैंड बन ही नहीं सकता।

इन्होंने हिंसा का रास्ता बिल्कुल छोड़ा नहीं है। सिर्फ भारत सरकार की ओर से की गयी राजनीतिक पहल का विरोध नहीं किया है। इसलिए मुइवा गुट से जो भी समझौता होगा, उसे स्वीकार कर लेंगे, मगर म्यांमार से लड़ाई जारी रहेगी। झिमोमी के अनुसार म्यांमार से बातचीत करने का कोई अर्थ नहीं है, क्योंकि वहां सैनिक सरकार है, जो हिंसा में ही हर समस्या का हल देखती है। अगर वैसा होता, तो विपक्षी गठबंधन की नेता औंग सान सू की को चुनाव में जीत हासिल करने के बाद सत्ता सौंपने के बजाए 'सैनिक जुंटा' उन्हें नजरबंद नहीं करती।

एनएससीएन नगा विद्रोहियों का वो संगठन है, जिसने म्यांमार के ही बदौलत पूरे पूर्वोत्तर में हिंसा फैलाने की राजनीति चलायी। इस काम में चीन से भी उन्हें काफी बढ़ावा मिला। आज भी पूर्वोत्तर की म्यांमार से लगी सीमा मुख्य रूप से विद्रोहियों को हथियारों का प्रशिक्षण देने के लिए इस्तेमाल होती है। खासकर नगालैंड, असम एवं मणिपुर में सक्रिय विद्रोही तत्वों का अड्डा म्यांमार ही रहा है।

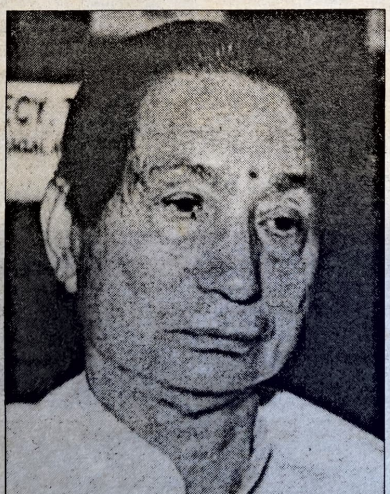
मगर अचानक घटनाक्रम एक अजीब से मोड़ पर आ गया है, जिसने एक साथ म्यांमार और उसकी मदद से भारत की पूर्वोत्तर सीमा में उत्पात मचाने वाले नगा विद्रोही, दोनों को ही पशोपेश में डाल दिया है। स्थिति यह पैदा हो गयी है कि जो नगा विद्रोही म्यांमार के उकसावे पर भारत में अलगाववाद को जिंदा रखे हुए थे, अब उनको म्यांमार से ही लड़ने के बारे में सोचना पड़ रहा है। नगाओं का कहना है कि उनके कई इलाके म्यांमार के कब्जे में हैं, जिनका इस्तेमाल भारत के खिलाफ होता रहा है, जो बिना लड़ाई के खाली नहीं कराए जा सकते।

इधर भारत सरकार ने एनएससीएन (आइसाक-मुइवा) को हिंसा बंद करने के लिए मना लिया और उधर म्यांमार से भी अच्छे सम्बंध स्थापित हो गए। इससे नगाओं के लिए भी भविष्य की राजनीति तय करना कठिन हो रहा है, इसलिए खपलांग गुट के वो हथियार अब म्यांमार के खिलाफ उठाने की तैयारी शुरू कर दी गई है, जो म्यांमार से भारत में हिंसा फैलाने के लिए मिले थे। हालांकि अभी इस बात की अधिकारिक तौर पर पुष्टि नहीं हुई है। कमाल की बात है कि जिस खपलांग ने म्यांमार की मदद से मणिपुर एवं नगालैंड में हिंसा का इतिहास रचा, उसी ने म्यांमार की राजनीतिक बातचीत का प्रस्ताव ठुकरा दिया और लड़कर अपना हक लेने की ठान रखी है।

इस बिन्दु पर केन्द्र सरकार को परेशानी नहीं है, क्योंकि इस दौरान भारत और म्यांमार के बीच जितनी बार बातचीत हुई है, उसमें नगालैंड मुद्दा रहा। म्यांमार ने विद्रोहियों को मदद न देने का वचन दिया है और जिस गुट (एनएससीएन-मुइवा) से युद्धविराम समझौता हुआ है, उसने अपने को इधर म्यांमार से अलग रखा है, लेकिन इससे जुड़े कई पहलू हैं, जो युद्धविराम का दायरा बढ़ाकर उसमें नगालैंड के आसपास के प्रदेशों के नगा इलाकों को शामिल करने के केन्द्र सरकार के फैसले के बाद उभरकर सामने आए हैं।

14 जून को केन्द्र ने एनएससीएन (आइसाक-मुइवा) महासचिव टी. मुइवा के कहने पर युद्धविराम के दायरे में नगालैंड के अलावा मणिपुर, असम एवं अरुणाचल प्रदेश को भी शामिल करने की घोषणा कर दी और उसी दिन से मणिपुर में आग लग गयी। विरोध असम में भी हुआ, मगर मणिपुर जैसा नहीं। मणिपुर में तो स्थिति काबू से बाहर हो गयी और प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी को स्वयं तीनों सम्बंध राज्यों के मुख्यमंत्रियों से बातचीत करके आखिरकार युद्धविराम का दायरा नगालैंड तक ही सीमित रखने की घोषणा करनी पड़ी, लेकिन फिर उसका भी विरोध शुरू हो गया।

नगालैंड के मुख्यमंत्री एस.सी. जमीर ने केन्द्र सरकार से आग्रह किया कि पूर्व गृह सचिव के. पद्मनाभैया को मध्यस्थ के पद से हटाया जाए और ऐसे व्यक्ति को रखा जाए, जिसे इस क्षेत्र की पूरी समस्या की जानकारी हो। वर्तमान गृह सचिव ने युद्धविराम समझौते के बारे में 15 जून को कहा था कि सम्बद्ध राज्यों के मुख्यमंत्रियों की राय ले ली गयी है, जबकि असम, नगालैंड, अरुणाचल प्रदेश एवं मणिपुर चारों सरकारों ने न केवल यह कहा कि उनसे मशविरा नहीं किया गया, बल्कि उनके विरोध का सबूत हमारे सामने है। ये अलग बात है कि नगालैंड के मुख्यमंत्री एस.सी. जमीर ने युद्धविराम समझौते का स्वागत किया। असम के मुख्यमंत्री तरुण गोगोई और जमीर दोनों ने पद्मनाभैया की मध्यस्थता पर आपत्ति जाहिर की है। अब चलते हैं मणिपुर और इस बात का विवेचन करते हैं कि जनाक्रोश ने इतना बिस्फोटक रूप क्यों लिया। मणिपुर की जनता को डर है कि उसका हाल कहीं असम और अरुणाचल प्रदेश वाला न हो जाए, क्योंकि युद्धविराम की सीमा बढ़ाना सिर्फ भूमिका है, असली मुद्दा है 'वृहत्तर नगालैंड', जो जाहिर है कि मणिपुर की जमीन काटकर बनाया जाना है। एनएससीएन की लड़ाई उसी सपने को पूरा करने के लिए है। एनएससीएन के प्रति केन्द्र की तुष्टीकरण की नीति का खामियाजा भला मणिपुर क्यों भुगते, जहां पहले से ही अवसरवादी राजनीति की वजह से अस्त-व्यस्तता की हालत बनी हुई है।



आसान नहीं राह : एस.सी.जमीर

मणिपुर की जनता ने 1963 में ही केन्द्र के भेदभावपूर्ण रवैया पर असंतोष जाहिर किया था, जब नगालैंड बना और उसमें असम एवं अरुणाचल प्रदेश के जिले काटकर जोड़े गए। मणिपुर को राज्य का दर्जा देने की मांग 1950 के दशक से उठ रही थी, लेकिन उनकी मांग आकर सुनी गयी 1972 में। नगालैंड बनने के समय मणिपुर केन्द्र शासित प्रदेश था।

नगाओं को नहीं, बल्कि नगा विद्रोहियों को खुश करने के लिए केन्द्र ने पूर्वोत्तर के अन्य राज्यों की भावनाओं की उपेक्षा की, जिसका परिणाम है कि उत्तर पूर्व को विश्वास में लेने और मुख्यधारा में लाने के लिए लगातार दी जा रही आर्थिक पैकेज समेत कई रियायतें बेकार साबित हो रही हैं। असम से दीमापुर और रंगापाड़ा तथा अरुणाचल प्रदेश (जो 1963 में उत्तर पूर्व फ्रंटियर एजेंसी कहलाती थी) से तुएन्सांग एवं मोन जिले नगालैंड में मिला दिए गए। दीमापुर और रंगापाड़ा में नगा आबादी नाममात्र होने के बावजूद ये जिले नगालैंड बनाने के लिए इस्तेमाल किए गए। अब जो 'वृहत्तर नगालैंड' बनेगा, तो गाज मणिपुर पर गिरेगी, जहां नगा आबादी भी है और उसी की शुरुआत थी नगा आबादी वाले इलाकों में युद्धविराम लागू करना।

– मयंक शेखर